International Journal of Education and Science Research Review
ISSN 2348-6457
www.ijesrr.org February- 2015, Volume-2, Issue-1 Email- editor@ijesrr.org

'हिन्दी–कथा–साहित्य में आंचलिक स्वर'

डॉ0 रेशू चौहान
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग,
रघुनाथ गर्ल्स स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ

सारांश
प्रत्येक क्षेत्र का अपना आंचलिक समाज होता है। उसकी अपनी भौगोलिक स्थिति में विशिष्ट प्रकार का अस्तित्व एवं पहचान होती है। किसी क्षेत्र की सीमा पर बसे उनके गाँवों, नगरों, कस्बों आदि की भौगोलिक परिस्थितियाँ, आर्थिक समस्याएँ, लोकजीवन, लोकभाषा, लोकगीत, रीति, रिवाज, उत्सव त्योहारों आदि से सम्बन्धित जीवन व्यवस्था में लगभग समानता पाई जाती है। इसी समानता को हम उस प्रदेश की 'आंचलिकता' नाम से सम्बोधित करते आए हैं। जब किसी विशेष अंचल में देश और काल के वैशिष्ट्य के कारण भौगोलिक स्थान तथा ऐतिहासिक काल के दबाव के कारण कोई विशिष्ट विचारधारा पनपने लगती है तो आंचलिकता के रूप में पुष्ट होती है। प्रस्तुत शोध पत्र में आंचलिक कथा साहित्य के इसी स्वर को आधार बनाया गया है।

भारतवर्ष ग्रामों का देश है। आज भी यहाँ की अधिकांश जनता गाँवों में ही निवास करती है। आंचलिकता भी कथा–साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियों में से एक है। कथा–साहित्य का प्राण गाँवों में ही बसता है अतः आचलिक साहित्य का भारत की जनता से भी प्राचीन सम्बन्ध है। साहित्य में यूँ तो स्थानीय या प्रादेशिक तत्वों का आगमन भी पुराना ही है किन्तु हिन्दी कथा–साहित्य में आंचलिकता को प्रवृत्ति के रूप में स्थापित करने का श्रेय श्री फणीश्वरनाथ रेणु को ही दिया जाता है। उनकी कति 'मैला आँचल' पूर्णरूप से आंचलिक कृति है। इसके प्रकाशन के पश्चात् से ही 'आंचलिकता' हिन्दी कथाकारों, आलोचकों के मध्य चर्चा का विषय बनी। अब इसे साहित्यिक विधाओं के वर्गीकरण का भी आधार बनाया जाने लगा फलस्वरूप परवर्ती कथाकारों ने आंचलिक साहित्यिक विधाओं का लेखन किया जिसमें आंचलिक उपन्यास एवं कहानी प्रमुख हैं।

यह तथ्य स्थापित हो चुका है कि हिन्दी उपन्यास गद्य साहित्य की प्राचीनतम विधा है। आंचलिक सर्जना के इसी मौलिक अस्तित्व की ओर इंगित करते हुए हम आंचलिक उपन्यासों के विषय में यहाँ विभिन्न विद्वानों क मतों की व्याख्या प्रस्तुत कर रहे हैं–

हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार, ''आंचलिक शब्द प्रायः उपन्यास लेखन के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है। आंचलिक उपन्यासों में कोई विशिष्ट अंचल व क्षेत्र या उसका कोई एक भाग या गाँव ही प्रतिपाद्य व विवेच्य होता है। आंचलिकता की सिद्धि के लिए स्थानीय दृश्यों, प्रकृति, जलवायु, त्यौहार, लोकगीत, बातचीत का विशिष्ट ढंग, मुहावरे, उनका अपना रोमांस, नैतिक मान्यताएँ आदि का समावेश बड़ी सतर्कता के और सावधानी से किया जाना अपेक्षित है।''

डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा ने आंचलिक चित्रण के लिए यथातथ्य चित्रण को अनिवार्य माना है और इस तटस्थ चित्रण के लिए वह वर्णित अंचल के प्रति लेखक के गहरे ममत्व और घनिष्ठ आत्मीयता को अनिवार्य मानते हैं, ''कुछ उपन्यासों में किसी प्रदेश विशेष का यथातथ्य और बिम्बात्मक चित्रण प्रधानता कर लेता है और उन्हें प्रादेशिक या आंचलिक उपन्यास कहा जाता है।''

डॉ0 गोविन्द त्रिगुणायत आंचलिकता के लिए स्थान विशेष के सम्पूर्ण वातावरण का चित्रण स्थानीय विशेषताओं के साथ होना आवश्यक मानते हैं। उन्होंने लिखा है, ''जिन उपन्यासों में स्थान विशेष के सम्पूर्ण वातावरण का सांग, संश्लिष्ट और निष्कपट रूप से समस्त स्थानीय विशेषताओं के साथ चित्र प्रस्तुत किया जाता है, उन्हें आंचलिक उपन्यास कहते हैं।''
आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के अनुसार, ''आंचलिक उपन्यास वह होता है जिसमें अपरिचित भूमियों और अज्ञात जातियों का वैविध्यपूर्ण चित्रण हो।''

डॉ0 राधेश्याम शर्मा 'कौशिक' के अनुसार, ''आंचलिक उपन्यास का प्रणेता आंचलिक संस्कृति का आँखों देखा चित्रण करता है। उसमें यथार्थ की स्थिति महत्त्वपूर्ण और विश्वसनीय होती है।''

डॉ0 रामदरश मिश्र ने आंचलिक उपन्यास को अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास माना है, ''आंचलिक उपन्यास तो अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है। उसका सम्बन्ध जनपद से होता है। ऐसा नहीं, वह जनपद की ही कथा है। किसी अंचल या जनपद के जीवन से जिन्हें प्रीति नहीं होती, ऐसे लेखक भी स्थानीय रंगत देकर सामान्य पात्रों की कथाओं को घटित करते चलते हैं। ×× आवश्यकतानुसार कहानी एक गाँव से दूसरे, तीसरे गाँव या शहर तक संक्रमण करती चलती है।''

डॉ0 विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के अनुसार, ''आंचलिक उपन्यास उन उपन्यासों को कहते हैं जिनमें एक विशेष अंचल के निवासियों का जीवन अपने समग्र रूप में विस्तार के साथ चित्रित होता है।''

डॉ0 सुषमा धवन के अनुसार, ''किसी अंचल–विशेष की भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं का अंकन करना आंचलिक उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य माना जाता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं को सन्दर्भित करते हुए कहा जा सकता है कि आंचलिकता स्वातन्त्र्योत्तर उपन्यासों की महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है जो सम्पूर्ण उपन्यास की संरचना में वस्तु से लेकर संरचना दृष्टि तक मानवीय शरीर में रक्तधारा के समान प्रवाहित होती रहती है और सम्पूर्ण उपन्यास के संघटन सूत्रों को प्रभावित करती है।

सामान्य उपन्यासों की कथा से सर्वथा भिन्न धरातल पर बुनी इसकी कथा केवल वर्णनात्मक स्तर पर घटनाओं के स्तर पर, कारण कार्य भाव से न जुड़कर सारे परिवेश को उसकी समग्रता में रूपायित करती है। इस रूपायन ने उसकी कथा–संरचना बदली है। पात्रों के चेहरे और मनःस्थितियाँ बदली हैं। उनकी कथा संरचना में अनुभव और दृष्टि इस तरह संगठित हुई हैं कि रचना का सम्पूर्ण धरातल ही परिवर्तित हो गया है।

आंचलिक उपन्यासों का कथा–विषय क्षेत्र, वे ग्राम एवं अंचल होते हैं जिन पर साधारण जन का ध्यान नहीं जाता; चूँकि वे पिछड़े भी होते हैं अतः लाचार, निरक्षर सीधी–सादी जनता एवं उनकी जीवन शैली कथा को आधार देते हैं।

आंचलिक उपन्यासों की कथावस्तु में अन्य उपन्यासों की कथावस्तु की तुलना में बिखराव दिखाई देता है। जबकि अन्य उपन्यासों के कथावस्तु में केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति होती है। इसलिये आंचलिक उपन्यासों की कथावस्तु में कथा तन्तुओ में एकसूत्रता अथवा सुसम्बद्धता नहीं दिखाई देती क्योंकि ''उनका आन्तरिक एकात्म्य और कथ्य पात्रों से सम्बन्धित न होकर अंचल की समग्रता और पूर्णता से होता है, जिसे उजागर करना उनका लक्ष्य होता है। उपन्यासकार की केन्द्रीय दृष्टि अंचल की सम्पूर्ण विविधता और सम्रगता पर केन्द्रित होती है और वह ही उपन्यास का नायक होता है।'' अंचल के समग्र जीवन को प्रस्तुत करने के कारण आंचलिक उपन्यासों के कथानक में बिखराव होता है। आंचलिक उपन्यासों में परिवेश कथानक के निर्माण के लिये एक सर्जनात्मक उपकरण के रूप में उपस्थित रहता है।

आंचलिक उपन्यासों में अन्य उपन्यासों की तुलना में चरित्र विन्यास का एक सर्वथा नवीन रूप देखने को मिलता है। उपन्यासकार का ध्यान किसी एक विशेष पात्र पर न होकर सम्पूर्ण अंचल पर होता है, ''किसी एक पात्र पर उपन्यासकार का फोकस नहीं होता है बल्कि अंचल ही उसका नायक होता है, और अंचल का जीवन ही वहाँ लेखक का वक्तव्य होता है। कथाकार उसी अंचल से सम्बद्ध तमाम छोटी–छोटी कथाओं, प्रसंगों, सन्दर्भों की सृष्टि करता है और किसी भी पात्र की कहानी को बहुत दूर तक अकेला नहीं चलने देता है।'' आंचलिक उपन्यासकार का अपने प्रतिपाद्य अंचल विशेष से गहरा जुड़ाव या उस अंचल विशेष का अभिन्न अंग होने के कारण अनेक जीवन्त चरित्रों की सृष्टि करके रचना की प्रामाणिकता को बढ़ाता है।

आंचलिक उपन्यासों में मुख्य पात्र के अभाव के साथ–साथ पात्रों की बहुलता भी देखने को मिलती है। पात्रों की संख्या अधिक होन के कारण सम्पूर्ण अंचल का कोई कोना छूटता नहीं है, ''पात्रों की अधिक संख्या वास्तव में इसलिये रखी जाती है कि रचनाकार को अपने अंचल को उसकी समग्रता में रूपायित करना होता है और हर पात्र अंचल के तमाम आयामों का प्रतिनिधि बनकर आता है।''

किसी भी उपन्यासकार के रचना का आधार ही उसका परिवेश–बोध होता है, ''रचना का कच्चा उपकरण वह परिवेश के भीतर से ही सहेजता है। परिवेश से कथ्य छाँटने, चुनने में उपन्यासकार की रचना दृष्टि विकसित होती है। इस तरह उपन्यासकार और परिवेश का रिश्ता बहुत सूक्ष्म, अपरिभाषेय सा है।'' आंचलिक उपन्यासों में प्राकृतिक वातावरण पृष्ठभूमि के रूप में न आकर कथानक के निर्माण में उसकी सर्जनात्मक सहभागिता होती है। आंचलिक उपन्यासकार परिवेश से आंचलिक रंगत देने के साथ–साथ कोई कथा भी कहता है, ''परन्तु आंचलिक उपन्यासों में उपन्यासकार

परिवेश से दुहरा काम लेता है– आंचलिक रंगत तो देता ही है, साथ ही कोई कथा भी कहता है, कोई संवेदना भी गढ़ता है।'' आंचलिक उपन्यासों में प्राकृतिक वातावरण जीवन सन्दर्भों से जुड़कर और सार्थक हो उठता है। इस प्रकार आंचलिक उपन्यासों में प्राकृतिक परिवेश पृष्ठभूमि से कहीं अधिक सर्जक तत्व के रूप में आता है।

आंचलिक उपन्यासकार अंचल–विशेष के समग्र जन–जीवन को एवं उसकी माटी की गंध को शब्द प्रदान करता है। जहाँ सामान्य उपन्यासकार का वार्तालाप की भाषा पर पात्र के व्यक्तित्व का रंग हल्का होता है, वहीं आंचलिक उपन्यासों में यह रंग अंचल विशेष से सम्बद्ध होने के कारण गहरा होता है, क्योंकि आंचलिक पात्र आंचलिक भाषा का प्रयोग अधिक व्यापक रूप में करते हैं। इस आंचलिक भाषा का प्रयोग केवल उस उपन्यास के पात्र ही नहीं करते वरन् लेखक स्वयं भी उस भाषा और शैली का प्रयोग करता है। स्थानीय बोली का प्रयोग करने के कारण आंचलिक वातावरण अधिक जीवंतता के साथ प्रस्तुत किया जा सकता है। इस विषय में आंचलिक उपन्यासकार रामदरश मिश्र का मंतव्य कुछ इस प्रकार है, ''विशेष प्रकार की अनुभूति को कहने के लिये जब हमारी तथाकथित साहित्यिक भाषा में ठीक–ठाक शब्द नहीं मिलते, तब स्थानीय शब्दों का प्रयोग लेखक की अनिवार्य विवशता हो जाती है।'' इस प्रकार आंचलिक उपन्यासों में अंचल के चित्रण में यथार्थता लाने के लिये स्थानीय बोली की कहावतें, मुहावरें, गलियाँ, गीत आदि का प्रयोग किया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि आचलिक उपन्यास में स्थान विशेष अर्थात् किसी विशिष्ट अंचल का समग्र रूप में चित्रण वहाँ की लोक भाषा में होता है। विशिष्ट अंचल की संस्कृति वहाँ के लोगों के रहन–सहन, खान–पान, तीज–त्यौहार, वेशभूषा, धार्मिक अनुष्ठान, मेलें, नृत्य गीत, बोली बानी आदि का निरीक्षण कर उसका यथार्थ चित्रण करता है। आंचलिक उपन्यासों के कथानक और पात्र अंचल की देन होते हैं, जिसका अनुभव पाठक को उपन्यास पढ़ने से होता है। इसके साथ–साथ लेखक स्थितियों का केवल यथार्थ चित्रण न करके नयी चेतना का भी वर्णन करता है। स्थापित समाज जीवन स अलग विशेषता दर्शाने वाला भू–भाग अथवा मानव समूह आंचलिक उपन्यासों का विषय बनता है।

श्री ब्रजविलास श्रीवास्तव ने आंचलिक उपन्यासों के उद्देश्य को आवश्यक तत्व के रूप में इस प्रकार परिभाषित किया है, ''किसी अंचल विशेष की भौगोलिक सामाजिक और सांस्कृतिक विशेषताओं का चित्रण करना आंचलिक उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य होता है।'' स्थानीयता एवं सार्वभौमिकता के सुन्दर समन्व्य में आंचलिक उपन्यास की विशिष्टता निहित हैं। आंचलिक उपन्यास जिस दृष्टिकोण को लेकर चलता है, उसके कारण समाज का परिवेश स्वयं व्यक्ति के समान मुखर हो उठता है।

अतः स्पष्ट हो जाता है कि आंचलिक उपन्यासों के विविध तत्व जैसे कि कथा–विन्यास, पात्र–संघटना, परिवेश परिस्थितियाँ, भाषा एवं उसमें निहित भाव या कथा का प्रतिपाद्य ही आंचलिक उपन्यास विधा के संघटन सूत्रों के रूप में कार्य करते हैं।

आंचलिक उपन्यास अपने नवीन संघटना सूत्रों के कारण अन्य उपन्यासों से भिन्न जान पड़ते हैं। इसी कारण इनकी विशेषताएँ भी अन्य उपन्यासों से भिन्न होती हैं। डॉ0 इन्द्रप्रकाश पाण्डेय ने इन्हीं विशिष्ट विशेषताओं की ओर ध्यान आकर्षित करने हेतु लिखा है, ''वह किसी स्थान के जीवन–सत्य को सफलता के साथ एकान्वित एवं केन्द्रित करता है। जिससे एक विशिष्ट चित्र उत्पन्न होता है और जिसके चरित्र और घटनाएँ सामान्य से पृथक हो जाती है। एक पूरा का पूरा मानव समुदाय विशिष्टताओं के साथ पाठक के सामने उभर आता है जिसमें व्यक्ति नहीं समूचा चित्रित वर्ग महत्त्वपूर्ण हो उठता है।''

उपर्युक्त परिभाषा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हिन्दी में जिन उपन्यासों को आंचलिक उपन्यासों के विशेषण से अभिहित किया जाता है उनकी कुछ विशेषताएँ होती हैं जो अन्य उपन्यासों की तुलना में सामान्य रूप से तथा प्रादेशिक उपन्यासों की तुलना में विशेष रूप में, अपनी होती हैं। इन विशेषताओं को हम निम्न बिन्दुओं के आधार पर समझ सकते हैं–

क्षेत्रीय आधार

आंचलिक उपन्यासों का अपना एक विशिष्ट क्षेत्र होता है। कथाकार किसी एक अंचल या विशिष्ट भू–भाग का चित्रण आंचलिक कृति में करता है। उस कृति में केवल देश के एक ही हिस्से पर कथा केन्द्रित रहती है अन्य भागों में रहने वाले जनसमूह या भौगोलिक परिस्थितियों से उनका कोई सरोकार नहीं होता।

भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

प्रत्येक क्षेत्र की अपनी भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ होती हैं। आंचलिक उपन्यास के लिए एक ऐसे क्षेत्र को चुना जाता है जिसकी भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशिष्टताएँ असामान्य प्रकार की हों। चूँकि ऐसी विशिष्टताएँ पिछड़े हुए और अपेक्षाकृत अज्ञात क्षेत्र व जातियों में परिलक्षित होती हैं अतः आंचलिक उपन्यास पिछड़े हुए और अनजान अंचलों व समाजों से सम्बन्ध रखता है। पिछड़े या किसी सीमा तक अनजान समाज में जीवन तत्त्वों का अभाव होता हो, ऐसी बात नहीं। उनमें अक्सर ऐसी प्राण–शक्ति छिपी होती है जो समृद्ध एवं सभ्य जातियों के लिए ईर्ष्या की वस्तु हो सकती है। इनका समग्र चित्रण उपन्यासकार कृति में करता है।

असामान्य जन–जीवन

इस सम्बन्ध में यह तर्क भी दिया जाता है कि एक क्षेत्र के निवासी के लिए अन्य सुदूर क्षेत्र का जीवन असामान्य प्रकार का ही होगा जिसकी निजी विशेषताएँ होंगी। परन्तु यदि असामान्य शब्द पर ध्यान दें तो इस तर्क का आधार ही समाप्त हो जाता है क्योंकि असामान्य की स्थापना सामान्य के बीच हो सकती है– सामान्य के मध्य जो वैसा न दिखाई दे वही असामान्य है। उदाहरणार्थ, मध्य प्रदेश अथवा भारतवर्ष के सामान्य जन–जीवन की तुलना में बस्तर के गोंडों का जीवन असामान्य प्रकार का है। भारतीय संस्कृति अथवा मध्यप्रदेश की संस्कृति को जिन रूपों में हम जानते हैं उससे बिल्कुल भिन्न प्रकार की संस्कृति भारत के हृदय स्थल में रहने वाले गोंडों की है। एक एस्किमो का जीवन एक भारतीय के लिए असामान्य हो सकता है परन्तु एस्किमों के देश को देखते हुए वह पूर्ण सामान्य है। हाँ, यदि उन एस्किमों में ही कोई ऐसा समुदाय मिले जो उस प्रकार के जीवन से, जिसे एस्किमों जाति का सामान्य जीवन माना जाता है, भिन्न प्रकार का जीवन व्यतीत करता हो तो उसे अवश्य ही असामान्य कहा जा सकता है। यह असामान्यता दो विपरीत कारणों से आ सकती ह– नव–जागृति के अभाव से अथवा नव–जागृति के आधिक्य से। परन्तु आंचलिकता के सम्बन्ध में तो असामान्यता केवल जागृति के अभाव का ही परिणाम होती है।

परम्पराएँ एवं समस्याएँ

इसमें भी सन्देह नहीं कि ऐसी परिस्थितियाँ कुछ समस्याओं को जन्म देती हैं। जिनसे समाज जूझता हुआ प्रदर्शित किया जाता है। प्रत्येक आंचलिक उपन्यास में इसी कारण कोई समस्या चित्रित की जाती है। परन्तु आंचलिक उपन्यासों का आंचलिक जीवन आधुनिक काल का होता है इसलिए नवीन जागृति का प्रभाव भी उन पर पड़ता हुआ दिखाया जाता है। यह जागृति या तो आंचलिक पात्र में स्वयं उद्भूत होती है अथवा किसी बाह्य पात्र के माध्यम से अंचल में प्रवेश करती है। इसका परिणाम यह होता है कि अंचल करवट बदलने लगते हैं और उनके जाग्रत होने की आशा बलवती होने लगती है।

समाज अपनी भौगोलिक परिस्थितियों की उपज होता है अतः अंचल के भूगाल का वहाँ के निवासियों के रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाज आदि पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। चूँकि यह प्रभाव उस समाज पर पड़ता है जो अपेक्षाकृत असभ्य होता है, इसलिए अंधविश्वास, अद्भुत एवं असामान्य लगने वाली स्थितियों को वह जन्म दे सकता है; परन्तु प्रकृति से सीधा सम्बन्ध होने के कारण उनके जीवन में जिस सरलता एवं स्वाभाविकता का वर्णन होता है वह सभ्य समाज में प्राप्त नहीं होती।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आंचलिक उपन्यासों में अंचल से सम्बन्धित वे सभी विशिष्टताएँ, समस्याएँ, अमीरी–गरीबी, पर्व–त्यौहार, मेलं, लोकगीत, कथा नृत्य, मुहावरें, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विशेषताओं का चित्रण होता है। ये उपन्यास की गति बढ़ाने के लिए सहायक तत्वों के रूप में कार्य करते हैं।

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य कोश– डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ 141
2. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त– डॉ0 गोविन्द त्रिगुणायत, पृष्ठ 433
3. सारिका– नवम्बर 1961, पृष्ठ 91
4. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का शिल्प– विकास, पृष्ठ 54
5. 'आंचलिक उपन्यास, डॉ0 रामदरश मिश्र का आलेख– हिन्दी के आंचलिक उपन्यास– सं0 डॉ0 रामदरश मिश्र, ज्ञानचंद गुप्त, पृष्ठ 4
6. आंचलिक उपन्यास और ग्रामीण यथार्थ– डॉ0 विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के उद्धृत– पृस्तक वही– सं0 रामदरश मिश्र, पृष्ठ 23
7. हिन्दी उपन्यास, सुषमा धवन, पृष्ठ 40
8. आंचलिक उपन्यास : संवेदना और शिल्प– ज्ञानचन्द गुप्त, पृष्ठ 18
9. रामदरश मिश्र के उपन्यासों में आंचलिकता– डॉ0 प्रदीप श्रीधर, पृष्ठ 16
10. हिन्दी उपन्यास : अन्तर्यात्रा– रामदरश मिश्र, पृष्ठ 192
11. श्री ब्रजविलास श्रीवास्तव, ''हिन्दी उपन्यासों में नये प्रयोग, 'आलोचना', जनवरी– 1956, पृष्ठ 81
12. हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में जीवन सत्य : डॉ0 इन्द्रप्रकाश पाण्डेय, पृष्ठ 23